AMOGHVARTA

ISSN : 2583-3189

नागार्जुन का जीवन परिवेश एवं साहित्यिक चिंतन

ORIGINAL ARTICLE

Author

डॉ० सरिता कुमारी,
सहायक शिक्षिका,
परियोजना बालिका उच्च विद्यालय,
ईचाक, हजारीबाग, झारखण्ड, भारत

शोध सार

नागार्जुन हिन्दी और मैथिली के अप्रतिम लेखक और कवि थे। अनेक भाषाओं के ज्ञाता तथा प्रगतिशील विचाराधारा के साहित्यकार नागार्जुन परिवार एवं समाज की विषम परिस्थितियों के ऊपज थे। यायावरी जिन्दगी की लम्बी पदयात्रा के अनुभवों से संश्लिष्ट थे, जिसके कारण जिन्दगी का यथार्थवाद, कटु अनुभव, दुःख–वेदना, गरीबी, सामाजिक असमानता के प्रति संघर्षरत् रहते हुए उन्होंने मार्क्सवादी विचारधारा को अपने जीवन का अभिन्न अंग बनाया। कहा जा सकता है कि 'धुमक्कड़ी का अणु' जो बाल्यकाल में ही शरीर के अंदर प्रवेश पा गया, वह रचना धर्म की तरह ही विकसित होता गया। नागार्जुन का जीवन चिंतन की यात्रा विभिन्नता से भरी रही इसके पीछे न केवल उनका पारिवारिक व सामाजिक पृष्ठभूमि रही बल्कि वे वैसे परिवर्तित दौर में पल–बढ़ रहे थे, जब देश में ब्रिटिश सरकार के प्रति क्षोभ, गुस्सा व्याप्त था। इनका युवावस्था कई पड़ावों से होकर आगे बढ़ रहा था एक ओर बनारस की घाटों का अनुभव वहीं आर्य समाज का प्रभाव एवं बौद्ध दर्शन के प्रति झुकाव उन्हें अन्दर से नई आंदोलनों के लिए खड़ा कर रहा था। इनके व्यक्तित्व में एक ओर जहाँ कबीर, प्रेमचंद राहुल सांस्कृत्यायन, निराला के स्पष्टवादी विचार एवं बौद्ध दर्शन का प्रभाव दिखता है, वहीं दूसरी ओर सुभाषचन्द्र बोस, स्वामी सहजानन्द, जयप्रकाश नारायण, विनोबा भावे, राममनोहर लोहिया के विचारों से भी ओत–प्रोत थे। नागार्जुन लगभग अड़सठ वर्ष तक रचना कर्म से जुड़े रहे। कविता, उपन्यास, कहानी, संस्मरण, यात्रा–वृतांत, निबंध, बाल साहित्य सभी विधाओं में इन्होंने कलम चलाई।

मुख्य शब्द

घुमक्कड़ी, फक्कड़पन, दकियानुसी, मार्क्सवादी.

नागार्जुन का व्यक्तित्व एवं जीवन परिवेश

हिन्दी साहित्य के इतिहास में बाबा नागार्जुन का नाम गर्व से लिया जाता है, क्योंकि उनकी रचनाओं में लोकजीवन की व्यथा बहुत ही मार्मिकता एवं सूक्ष्मता के साथ देखने को मिलता है यही कारण है कि इन्हें जनवादी कवि के रूप में जाना जाता है। इनकी रचनाओं में राजनीतिक, सामाजिक व आर्थिक स्तर पर विवशता, लाचारी के साथ–साथ भ्रष्टाचार के स्वरूप परिलक्षित होते हैं।

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी रचनाओं में नागार्जुन का एक विशिष्ट स्थान है। वे हिन्दी और मैथिली के प्रगतिशील कवि व कथाकार हैं। हिन्दी साहित्य में नागार्जुन 'मार्क्सवाद' से प्रभावित माने जाते हैं। अपने युग के समाज का युगीन इतिहास इनकी रचनाओं में प्राप्त होता है। नागार्जुन ने मुख्य रूप से भारत के ग्रामीण परिवेश राजनीतिक दांव–पेंच, सामाजिक व आर्थिक असमानता को केन्द्र बनाया है।

प्रेमचंद के पश्चात् ग्रामीण समाज के पीड़ित, शोषित किसान मजदूर वर्ग का जीवन चित्रण करने वाले कथाकारों में नागार्जुन का नाम उल्लेखनीय है।

"नागार्जुन का साहित्य में समाजवाद, यथार्थवाद, मार्क्सवाद का साहित्यिक संस्करण है। समाजवादी यथार्थवाद सामाजिक विषमताओं के मूल कारण की पहचान कर उन्हें नष्ट करने का प्रतिक्रियात्मक हल प्रस्तुत करता है। इसके अन्दर ऐसे समाजों का चित्र उपस्थित किया जाता है, जो उपेक्षित निम्न श्रेणी के हो तथा [1]

फक्कड़पन और घुमक्कड़ी प्रवृति नागार्जुन के जीवन की प्रमुख विशेषता रही है। व्यंग्य नागार्जुन के व्यक्तित्व में प्राकृतिक रूप से सम्मिलित है। चाहे सरकार हो, समाज हो या फिर मित्र, उनके व्यंग्यबाण सबको बेध डालते हैं। कई बार सम्पूर्ण भारत के भ्रमण करने वाले इस कवि को अपनी स्पष्टवादिता और राजनीतिक कार्यकलापों के कारण जेल भी जाना पड़ा। काँग्रेस द्वारा गाँधी जी के नाम के दुरुपयोग पर नागार्जुन प्रश्न उठाते हुए 'झण्डा' कविता में कहते हैं:

"गाँधीजी का नाम बेचकर बतलाओं कब तक खाओगे?
यम को भी दुर्गंध लगेगी नरक भला कैसे जाओगे?"[2]

नागार्जुन हिन्दी साहित्य में 'नागार्जुन' मैथिली में 'यात्री' लेखकों, मित्रों व राजनीतिक कार्यकर्त्ताओं में 'नागा बाबा' संस्कृत में 'चाणक्य' नाम से विभूषित कथाकार एवं कवि का वास्तविक नाम 'वैद्यनाथ मिश्र' हैं। नागार्जुन का जन्म 30 जून, 1911 को बिहार राज्य के मधुबनी जिला अन्तर्गत सतलखा गाँव में हुआ था। वे अपने माता–पिता की पाँचवीं सन्तान थे, उनके चार भाई–बहनों का देहान्त शैशव में ही हो चुका था। माँ उमादेवी का देहान्त छठी संतान के जनने के क्रम में ही हो गया। जब माँ की मृत्यु हुई, तब बालक की उम्र यही कोई चार–पाँच वर्ष की रही होगी। बालक के जेहन में अपने बाप के प्रति कोई सकारात्मक भाव नहीं था। उसे उसका बाप एक ऐसे पुरुष के रूप में दिखाई देता था जो उनकी बीमार माँ की देह पर उसे भोगने के लिए बैठा है। उसे बचाने वाला कोई नहीं है। बालक एक कोने में निरीह दशा में दुबका भयभीत दशा में सब देख रहा है। नागार्जुन के पिताश्री गोकुल मिश्र ने बैद्यनाथ धाम (देवघर) जिला संथाल परगना में जाकर दीर्घ जीवी पुत्र की कामना से महीने भर का अनुष्ठान रखा था। इसी साधना के पश्चात् पैदा होने के कारण नागार्जुन का नाम बैद्यनाथ रखा गया।

उनके पिता गोकुल मिश्र घुमक्कड़, भंगेड़ी, रूढ़िवाद, कठोर व फक्कड़ किस्म के व्यक्ति थे। पिता की मृत्यु काशी में गंगा के किनारे मणिकर्णिका घाट पर सितम्बर 1943 में हुई थी। नागार्जुन की माँ गाँव की एक सीधी–सादी महिला थी। पूजा–पाठ करने वाली लेकिन इनकी मृत्यु असमय हो गयी। माता के वात्सल्य से वंचित कथाकार के शिशु मन पर पहली छाप विधवा–चाची के पीड़ा भरे जीवन की थी। एक रूढ़िवादी अशिक्षित मैथिल ब्राह्मण परिवार में नारी का वैधव्य कितना बहिष्कृत एवं अपमानित होता है इसका प्रमाण रतिनाथ की चाची में गोरी के जीवन से मिलता है। नागार्जुन के नाना द्वारा दी गयी महिषि गाँव की जमीन की देख–रेख करने के लिए गोकुल मिश्र को कई वर्ष वही गुजारने पड़े। उनके परिवार में संस्कृत की परंपरा थी। नागार्जुन की शिक्षा संस्कृत 'पाठशाला' में हुई। उन्होंने तरौनी में प्रथम परीक्षा पास की और 'गनौली' के संस्कृत विद्यालय में रहकर 'व्याकरण मध्यमा' पास की। काशी में जाकर संस्कृत में आचार्य परीक्षा पास की। प्राकृत और पाली भाषाओं का विशेष अध्ययन किया। नागार्जुन ने कभी भी औपचारिक ढंग से किसी भी स्कूल कॉलेज या विश्वविद्यालय से शिक्षा नहीं प्राप्त की, जो कुछ भी सीखा जिन्दगी और वातावतरण के कटु अनुभवों से सीखा। अनुभवों ने बालक को कम उम्र में ही कई ऐसे अनुभव दिए जो एक आम बालक के लिए कठोर सा लगता है। 1931 में हाजीपुर गाँव की बारह वर्षीय अपराजिता देवी के साथ विवाह हुआ। पत्नी के प्रति उनके हृदय में गहन प्रेम था, किंतु अपनी यायावरी वृत्ति के कारण वह उन्हें यथोचित प्रेम व समय नहीं दे पाए। अपनी पत्नी के पास वह तीन या चार महीने से अधिक कभी नहीं रहे। उनका परिवार उनके छाया से सदैव वंचित रहा। उनके चार पुत्र एवं दो पुत्रियाँ हैं। नागार्जुन ने 1934 में घर छोड़ा एवं 1941 तक घर की कोई खोज खबर नहीं ली। सारा वक्त उन्होंने देश के विभिन्न क्षेत्रों में घूमने–फिरने में लगाया। इसी समय

वह भारत के दीन–हीन ग्रामीण जनों के करीब आए एवं उनकी दरिद्रता, अभाव एवं अभिशाप ग्रस्त जीवन को बड़ी ही सूक्ष्मता व करीबी से देखा। उन्होंने देखा की गरीब किसान वर्ग जमींदारों के शोषण की चक्की में पिस रहा है। इसी काल में उन्होंने देश में फैल रहे व्याप्त भ्रष्टाचार एवं राजनीतिक स्तर पर घट रहे अव्यवस्थित स्वरूप का नंगा नाच देखा– "लोगों की हृदय विदारक गरीबी ने बचपन की घुटन और कुण्ठा ने समाज की रूढ़िवादिता ने एवं जीवन [3] मातृभाषा मैथिली, पैतृक भाषा संस्कृत, पालि, अर्द्धमागधी, अपभ्रंश, सिंहली, तिब्बती, मराठी, गुजराती, बंगाली, पंजाबी, सिंधी इत्यादि।

भाषाओं को बोलते ही नहीं थे बल्कि इनसे सम्बंधित साहित्यिक रचना को पढ़कर एवं स्वयं में रूचि जगाकर नवीनतम साहित्य और कविता शैलियों से अपने–आपको परिचित कराते रहे। कहा जाता है कि बाबा नागार्जुन के पास कल के भोजन के पैसे नहीं होते, पर दिल्ली में सेंट्रल न्यूज एजेंसी से दस नयी बंगाली, मराठी, पंजाबी, पत्र–पत्रिकाएँ खरीदकर ले आते थे। इस प्रकार देखा जाय तो ऐसी ज्ञान–साधना रोगग्रस्त और निरंतर चिंताकुल व्यक्ति में दुर्लभ पाई जाती है। उनका जीवन अद्‌भुत है। समुद्र पार श्रीलंका की यात्रा के पश्चात् जब बाबा नागार्जुन घर लौटे तो इन्हें कई तरह के लाछंनाएँ और आलोचनाएँ सहनी पड़ी। पंडितों ने बड़ी–बड़ी दकियानुसी बातें बनानी शुरू कर दी कि यह आदमी एक तो अपने समाज से निकलकर बाहर गया, समुद्र पार गया, बौद्ध धर्म ग्रहण किया, आधा मुसलमान है आधा ईसाई है। इस लड़के को ब्राह्मण समाज में वापस नहीं लिया जा सकता, किंतु यह सच है कि जहाँ एक वर्ग सोच के स्तर पर रूढ़िवादी नियमों से बँधे होते हैं वहीं दूसरे युवा वर्ग परिवर्तनशीलता के परिचायक होते हैं। युवकों पर बाबा की क्रांतिकारी विचारधारा का बहुत गहरा प्रभाव पड़ चुका था सो उन लोगों ने उन बूढ़े पंडितों की परवाह किये बिना बाबा को गर्मजोशी से स्वागत किया।

नागार्जुन साहित्यिक गतिविधियों के साथ–साथ चल रहे भारतीय स्वाधीनता संग्राम के विभिन्न आंदोलनों में प्रत्यक्ष–परोक्ष रूप से उपस्थिति दर्ज करते रहे। नागार्जुन ने अपने साहित्यिक सफर में सुकुमार प्रकृति से लेकर खुरदरी राजनीति को अपना विषय बनाया। विद्रोही स्वभाव का भावुक कवि राजनीति के विरोधाभासी संस्कृति से क्षुब्ध है, इसलिए उसके अन्दर आक्रोश है। हिन्दी साहित्य को समृद्धि प्रदान करने वाले जनवादी कवि, कथाकार एवं स्पष्टवादी विचारों के पर्याय बाबा नागार्जुन का निधन 5 नवम्बर 1998 को हुआ।

एक रचनाकार के रूप में बाबा नागार्जुन का व्यक्तित्व और उनकी प्राथमिकताओं को और संवेदनालोक को ठीक–ठीक समझने के लिए हिन्दी साहित्य के साथ–साथ उनकी संस्कृत, बांग्ला और मैथिली कविताएँ भी भली–भाँति देखी, पढ़ी जानी चाहिए। याद रखने की बात है कि साहित्य अकादमी का पुरस्कार उन्हें मैथिली कवि के रूप में ही मिला था।

नागार्जुन का जीवन महाप्राण निराला की भाँति अभावग्रस्त रहा किंतु वे इतने स्वाभिमानी थे कि उन्होंने कभी किसी के आगे आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु हाथ नहीं फैलाया। उनकी लेखनी आडम्बरों, रूढ़ियों और विषमताओं के विरुद्ध जमकर चली है अपने अंदर की इस विद्रोही वृत्त को उन्होंने सदैव संरचनात्मक दिशाओं की ओर सक्रिय किया है। "प्रेमचंद की सी भारतीय कृषक मजदूर के प्रति आत्मीयता, निराला सा फक्कड़पन और अक्कड़पन व अनुचित बातों पर कबीर सी फटकार सबका मिला–जुला रूप ही नागार्जुन है।"[4]

बाबा नागार्जुन की घुमक्कड़ी एवं फक्कड़पन जीवन ने बहुत कुछ दिया। घुमंतु प्रवृत्ति होने के कारण इनके जीवन में समाज का संश्लिष्ट प्रभाव पड़ा जाति, समुदाय, धर्म, राजनीति, भाषा जैसे विभिन्न तत्वों ने इनके व्यक्तित्व को निखारा इसलिए निर्विवाद रूप से इनकी लेखन क्षमता में परिष्कार की विशेषता झलकती है और इन्हें किसी साहित्यिक संरचना में बांध पाना मुश्किल है। ये चिंतन के विविध आयामों में नयी धाराओं को गढ़ते रहे।

यथार्थवादी चिंतन

नागार्जुन शोषित और पीड़ित समाज का एक ऐसा निष्प्राण रूप हैं जिनका जीवन अभावों, दुखों और कष्टों में बीता जैसा कि डॉ. रामविलास शर्मा ने कहा हैः "जहाँ मौत नहीं बुढ़ापा नहीं है, जनता के असंतोष और

राज्य–समाई जीवन का संतुलन नहीं है वह कविता नागार्जुन है कि ढाई पसली के घुमंतू जीवन, दमे के मरीज, गृहस्थी का भार–फिर भी क्या ताकत है।"[5]

नागार्जुन सत्ता व्यवस्था एवं सामाजिक असमानता के प्रति आक्रोश व्यक्त करने में निरंतर अग्रणी रहे। उनकी कविता में राष्ट्रप्रेम तथा यथार्थ भारत की तस्वीर झलकती है। समाज के विभिन्न शोषित वर्गों का बारीकी से अध्ययन किया और परखा कि किस प्रकार शोषित वर्ग अभाव की चक्की में पीस रहा है, किंतु उच्च वर्ग भोग–विलास में पानी की तरह धन बहा रहा है। लोग मुखौटा लगाए हुए दोहरी जिन्दगी जी रहे हैं। बाहर से खद्दरधारी पर भीतर से कसाई इस संदर्भ में 'सच्च न बोलना' कविता से निम्न पंक्ति उद्धृत हैः

"जमींदार है साहूकार है, बनिया है व्यापारी है,
अंदर–अंदर विकट कसाई, बाहर खद्दरधारी है।"[6]

दूरदर्शिता व यथार्थता के प्रतिबिम्ब बाबा नागार्जुन छाप तत्कालीन समस्याओं पर उठाये गए संवेदनशील मुद्दे वर्तमान के दौर में प्रासंगिकता का स्वरूप धारण किये हुए हैं, वहीं दूसरी और सामाजिक चेतना के पैरोकार बुद्धिजीवी वर्ग को सोचने पर मजबूर करते हैं। नागार्जुन का केन्द्रीय बिन्दु कल्पना से इतर लोक–दृष्टि, जन–जागरुकता, मानवीय मूल्यों पर आधारित है, उनका विचार कभी भी यथार्थवाद के द्वंद्व के जटिलता में नहीं पड़ा है बल्कि यथार्थ चित्रण में अधिक।

नागार्जुन की लोकदृष्टि अत्यंत व्यापक और विशद् है। उन्होंने जहाँ समाज के प्रत्येक भ्रष्टाचार एवं योजनाओं की विफलता को यथार्थ रूप में रेखांकित किया। नागार्जुन जनकवि है यह स्वयं चरितार्थ भी करते हैं, क्योंकि उनकी भाषा, विचारधारा, रहन–सहन आदि विषयानुरुप ढाल लेते हैं। वे वास्तव में जनता के चारण हैं। वे गाँव गली की बात करते हैं और उस भाषा में कहते हैं जिससे सब परिचित है। बिना किसी लाग–लपेट के अपनी बात को कहने वाले कवि के रूप में सर्वाधिक लोकप्रिय हैं।

प्रगतिशील चिंतन

हिन्दी साहित्य में सबसे अधिक संवेदनशील और लोकोन्मुख जनकवि नागार्जुन की विशिष्टता इसी बात में रही है कि उनकी रचनाओं और उनके वास्तविक जीवन में गहरा सामंजस्य है। नागार्जुन बुनियादी तौर पर देहाती जीवन के कवि है। उनका कविता संसार का बड़ा भाग गाँव के अनुभवों से निर्मित हुआ है। उनकी कविताएँ सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक आदि पक्षों में एक बड़ा चिह्न हमारे समक्ष प्रस्तुत करती है। कवि नागार्जुन अपने युगीन यथार्थ और समसामयिक चेतना को अपनी कविता में मुखरित किया है, जिसमें एक ओर तो गरीब किसान, मजदूर शोषण के चक्र में पीसते हुए दाने–दाने को मोहताज है।

नागार्जुन की रचनाओं में प्रगतिवादी विचारधारा खुले रूप में दिखाई देती है। इनकी कविताओं में मार्क्सवादी के प्रति गहरी आस्था शोषित और दलित वर्ग के प्रति पक्षधरता, विश्व मानवता के प्रति चिंता दिखाई पड़ता है। इनके कवि व्यक्तित्व की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता है कि मार्क्सवाद में गहरी आस्था के बावजूद ये अपनी कविताओं में बिल्कुल स्वतंत्र हैं अर्थात् इन्होंने जब जैसा महसूस किया, वैसा ही लिखा। नागार्जुन का सम्पूर्ण कृतित्व प्रगतिशील चेतना का वाहक है। उन्होंने जनता की वास्तविकता को सामने लाया। उन्होंने अपने को पूर्णतः साहित्यिक गतिविधि में समर्पित कर तत्कालीन भिन्न–भिन्न समस्याओं को उजागर कर एक नयी चेतना का आलोक दिखाया।

"कई दिनों तक चूल्हा रोया, चक्की रही उदास
कई दिनों तक कानी कुतिया सोई उनके पास
कई दिनों तक लगी भीत पर छिपकलियों की गश्त
कई दिनों तक चूहों की भी हालत रही शिकस्त।"[7]

सामाजिक चिंतन

नागार्जुन की रचनाओं में समाज में पनपने वाली विकृतियों के प्रति गहरा आक्रोश है। इनके अनुसार समाज में आडम्बर, दिखावा और भ्रष्टाचार राष्ट्र की उन्नति में बाधक है, इससे भावी पीढ़ी में गलत आचरण की शुरूआत

होती है। आदमी की अभिव्यक्ति से विशुद्धता का लोप होता है और दूसरों पर निर्भरता बनी रहती है। इन सब विसंगतियों से मानव मूल्यों का ह्रास होता है, कवि अपनी रचनाओं में इन विषम परिस्थितियों में करारा व्यंग्य करते हैं। उन्हें आभास होता है कि श्रेष्ठजनों की जगह चापलूसों की कद्र बढ़ती जा रही है जिससे पूरी व्यवस्था ही दूषित होती जा रही है:

सपनों में भी सच न बोलना, वरना पकड़े जाओगे,
भैया, लखनऊ–दिल्ली पहुँचे, मेवा–मिसरी पाओगे।
मसाल मिलेगा रेत सको यदि गला मजूर किसान का,
हम मर–भुक्खों से क्या होगा, चरण गहों श्रीमान का!"[8]

अपने काल में कवि नागार्जुन सामाजिक विषमता को अभिव्यक्ति के केन्द्र में रखते हैं अमीर–गरीब के बीच बढ़ता फासला न केवल आदमी में तनाव पैदा करता है, बल्कि इसमें पूँजीवादी शोषण का नया रूप सामने आता है जो कि चिरकाल तक आभास होता रहा है। भारत में व्याप्त गरीबी इसी आभास का परिचायक है।

राजनीतिक चिंतन

नागार्जुन के काव्य का बहुत बड़ा हिस्सा राजनीतिक कविताओं से भरा पड़ा है। इनकी राजनीतिक से सम्बन्धित कविताओं में कबीर की तरह खुली आँखों में जीवन का निरीक्षण है। समकालीन राजनीतिक और उससे संचालित जीवन से गहरे जुड़े हुए थे। अवसरवादी चुनाव के टिकट प्राप्त करने की दौड़–धूप, नेताओं के आडम्बर आदि सब पर कवि की दृष्टि रही है और उसमें व्याप्त बुराइयों पर गहरा चिंतन व्यक्त किया है।

'इन्दुजी क्या हुआ आपको' शीर्षक कविता श्रीमती इंदिरा गाँधी की कूटनीतिज्ञता, भ्रष्टता और तानाशाही प्रशासनिक पर तीखी व्यंग्यात्मक प्रतिक्रिया के तौर पर रेखांकित करती है। कवि को श्रीमती गाँधी के व्यक्तित्व से काफी क्षोभ है। वे लिखते हैं:

"क्या हुआ आपको? क्या हुआ आपको?
सत्ता की मस्ती में भूल गई बाप को।
इन्दु जी इन्दु जी क्या हुआ आपको?
बेटे के तार दिया वोट दिया बाप को
इन्दु जी क्या हुआ आपको? क्या हुआ आपको?"[9]

नागार्जुन की यह विशेषता रही है कि राजनीतिक समस्याओं पर उनकी प्रतिक्रिया तुरंत व्यक्त होती दिखाई देती है। देश की आजादी का दुरुपयोग करनेवाले नेता एवं सत्ताधारी के प्रति जो चिंतन का आभास होता है वह व्यंग्यत्मकता को धारण किये हुए है। कवि मानवतावादी विचारधारा के पोशक हैं, जहाँ वे राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में शांति, सुखी तथा सुरक्षित देखना पसंद करते हैं।

मार्क्सवादी चिंतन

नागार्जुन की रचनाओं में मार्क्सवादी विचारों का स्पष्ट रूप दिखाई पड़ता है। इस प्रकार में मार्क्सवादी कवि के रूप में जाने जाते हैं। इस प्रकार की चिंतन में चेतना के स्तर पर कविता में सर्वहारा वर्ग की स्थापना कर पूँजीवादी को समाप्त करते हुए अमीर–गरीब, मालिक–मजदूर, जमींदार–कृषक, उच्चवर्ग–निम्नवर्ग के बीच द्वंद्व दिखाई देता है। गरीबी भूखमरी, बीमारी, अकाल, बाढ़ जैसे सामाजिक यथार्थ का सूक्ष्म चित्रण कवि ने किया है।

नागार्जुन के व्यक्तित्व पर क्लासिकी मार्क्सवाद का पूरा प्रभाव दृष्टिगत होता है। उनके अन्तर्मन में विद्यमान करुणा, मैत्री, शांतिप्रियता तथा मानव–प्रेम बौद्ध धर्म के प्रभाव के कारण है। उनके काव्य मानव–जीवन के प्रति गहरी सम्पशक्ति के कारण सम्प्राण और जन–संवेद्य बन पड़े हैं। उनकी भाषा में सरलता, सहज सम्प्रेषणीयता के साथ ही उसमें व्यंग्य की तल्खी के साथ–साथ करुणा और विनोद–वक्ता भी विद्यमान है। शिक्षा प्रणाली की स्थिति से पाठकों को अवगत कराते हुए नागार्जुन 'मास्टर' नामक कविता लिखते हैं:

"घुन–खाए शहतीरों पर की बारहखड़ी विधाता बाँचे
फटी भीत है, छत चूती है, आले पर बिसतुइया नाचे
बरसाकर बेबस बच्चों पर मिनट–मिनट में पाँच तमाचे
दुखहरण मास्टर गढ़ते रहते किसी तरह आदम के साँचे।"[10]

राजनीतिकरण से उपजे शोषणमूलक विचारधारा उनकी लेखनी का उग्र बिन्दू रहा है। उन्होंने उन मुद्दों को भी मुखर रूप प्रदान किया जो समाज की ढाँचागत व्यवस्था में नकारात्मक परिवर्तन कर देता है। सामाजिक वंचनाओं, व्यक्तिगत स्वतंत्रता व उनकी अभिव्यक्ति की कसौटी के प्रति कवि की पीड़ा संवेदनशील है।

निष्कर्ष

इस प्रकार इस लेख में यह ध्वनित होता है कि नागार्जुन मौलिक रूप से जनपक्ष रचनाकार थे। मार्क्सवादी विचारधारा से वे गहराई तक प्रभावित थे, लेकिन संवेदना और जीवन की वास्तविकताओं के दबाव में विचारधारा का अतिक्रमण करने से भी नहीं चूकते थे। दूसरी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि ग्रामीण जीवन के प्रति वे बहुत संवेदनशील थे और उस जीवन की स्मृतियां उनकी रचनाओं में बड़े प्रभावशाली बिंबों में व्यक्त होती हैं। भाव, जीवन–बोध और मानवीय संवेदना के वैविध्यपूर्ण चित्र उनकी रचनाओं में मिलते हैं और उन्हें आम जन–जीवन का रचनाकार कहा जाय तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी।

संदर्भ सूची

1. सिंह, त्रिभुवन. *हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद.* चतुर्थ संस्करण–1965, पृ० 17.
2. शोभाकांत (संपा०). *नागार्जुन रचनावली खण्ड तीन.* नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन, नेता जी सुभाष मार्ग, पहला संस्करण–2003, पृ. 107.
3. सुमित्रा, *नागार्जुन के उपन्यासों में लोकजीवन.* गाजियाबाद' के. एल. पचौरी, प्रकाशन 8/डी. ब्लॉक, एक्स इन्द्रापुरी लोनी, प्रथम संस्करण–2007, पृ० 62.
4. सुमित्रा, *नागार्जुन के उपन्यासों में लोकजीवन.* गाजियाबाद' के. एल. पचौरी, प्रकाशन 8/डी. ब्लॉक, एक्स इन्द्रापुरी लोनी, प्रथम संस्करण–2007, पष्० 62.
5. सिंह, नामवर (संपा.). *रामविलास शर्मा का कथन.* पुस्तकः नागार्जुनः प्रतिनिधि कविताएँ. नई दिल्ली :राजकमल प्रकाशन, प्रथम संस्करण–1984.
6. बादल, शम्भु (संपा.). *आज की विविध कविताएँ.* हजारीबागः आदित्य पब्लिषर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, मेन रोड, पृ. 42.
7. सिंह, नामवर (संपा.). *रामविलास शर्मा का कथन.* पुस्तकः नागार्जुनः प्रतिनिधि कविताएँ. नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन, प्रथम संस्करण–1984, पृ० 80.
8. बादल, शम्भु (संपा.). *आज की विविध कविताएँ.* हजारीबागः आदित्य पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, मेन रोड, पृ. 43.
9. सिंह, नामवर (संपा.). *रामविलास शर्मा का कथन.* पुस्तकः नागार्जुनः प्रतिनिधि कविताएँ. नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन, प्रथम संस्करण–1984, पृ० 104.
10. बादल, शम्भु (संपा.). *आज की विविध कविताएँ.* हजारीबागः आदित्य पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, मेन रोड, पृ० 43.

––==00==––